पढ़ने योग्य

अपूर्व पुस्तकें

मिलने का पता:—

बा० देवकीनन्दन खत्री रचित इस सचित्र उपन्यासके विषय में कुछ कहना सूर्य को दीपक दिखाने के बराबर है क्योंकि यह वही उपन्यास है जिसने अपनी रोचकता और मनोरंजकता से सभों का ध्यान अपनी तरफ खींच लिया और जिसकी अब तक लाखों ही प्रतिया छप कर बिक चुकी है। हिन्दी भाषा का यह सर्वप्रथम उपन्यास है और अगर सच कहें तो हिन्दी का प्रचार भारत के कोने कोने मे कर देने का मुख्य श्रेय इस उपन्यास ही को प्राप्त है। इसमें एक आश्चर्यजनक तिलिस्म का हाल लिखा गया है जिसके अन्दर जो कोई जाता था इस तरह फँस जाता था कि फिर किसी तरह निकल नहीं सकता था। इस भयानक तिलिस्म में एक अजदहे ने एक राजकुमारी को निगल लिया था जिसके छुड़ाने मे राजकुमार बीरेन्द्रसिंह को सिरतोड़ परिश्रम करना पड़ा। मूल्य १॥) सजिल्द २)

चन्द्रकांता संतति

इस प्रसिद्ध उपन्यास मे चन्द्रकान्ता के लड़कों का हाल लिखा गया है। इसमें ऐसे भयानक तिलिस्म और हैरत अंगेज ऐयारियों का हाल दिया गया है, हिम्मतवरों और बहादुरों की ऐसी ऐसी लड़ाइयों का हाल लिखा गया है, और कपटियों, बदमाशों और धूर्तों की ऐसी ऐसी चालाकियां दिखाई गई हैं कि पढ़ कर ताज्जुब करियेगा। चौबीस भागों में समाप्त-मूल्य-७॥)

उत्तमोत्तम पुस्तकें

उपन्यास

अधःपतन	॥)	गरीब की लड़की	।)
अभागिनी	॥)	गुप्तगोदना	३)
अत्याचार	।)	चन्द्रकला	।)
अब्दुल्ला का खून	≠)	चन्द्रकुमार	≠)
अमलावृत्तान्त माला	।॥)	चित्रकार	।)
अमृत पुलिन	॥)	चित्र	≡)
अवध की बेगम	॥=)	छाती का छूरा	-)॥
अघोरपंथी	≠)	देवता का प्रसाद	।)
आत्मत्याग	।)	पद्मिनी	=)
ईश्वरी लीला	≠)	प्रणयिनी परिणय	≠)
कमलिनी	।)	बसन्त का सौभाग्य	।)
कठपुतली	।)	बदरुन्निसा की मुसीबत	≡)
कान्स्टेबल वृत्तान्त माला	१।॥)	बंगाली बाबू	।)
कान्तिमाला	।-)	विद्याधरी	≠)
किले की रानी	।॥)	बिना सवार का घोड़ा	≠)
किस्मत का खेल	।-)	विचित्र खून	।)
किरण शशि	।-)	विधाता की लीला	।)
कुमारी रत्नगर्भा	।=)	विष विवाह	।)
कुलटा	≡)	माधुरी	।)
कोकिला	।)	मरता क्या न करता	=)
खूनी की आत्मकथा	।)	मेम और साहब	≠)
खोई हुई दुलहिन	।)	योगिनी विधवा	।)

रणवीर	६)	स्वर्ण लता	
राजेन्द्र कुमार	।)	सिद्धेश्वरी	।)
राज हैरत	१॥)	सुलोचना	≡)
लावण्यमयी	≈)	सुख शर्वरी	।)
सरला	≠)	सौतेली मां	≠)
सच्चा सपना	≡)	हवाई नाव	।)
समझ का फेर	।)	हिरण्यमई	≡)

नाटक

अन्धेरनगरी	≠)	वारिदनाद बध	≡)
कपटी मुनि	।)	बीरनारी	।–)
कलि कौतुक रूपक	≈)	बूढ़े मुंह मुंहासे	≡)
क्या इसीको सभ्यता कहते हैं	≠)	वैदिकी हिंसा हिंसा न भवति	≠)
जय नारसिंह की	=)	महारानी पद्मावती	।≠)
दुमदार दुलहिन	=)	महा अन्धेर नगरी	।)
द्रौपदी चीर हरण	॥)	रुक्मिणी परिणय	।)
नाट्य सम्भव	।≠)	सप्तम प्रतिमा	॥≠)
नागानन्द	।)	सरोजिनी	॥)
पद्मावती	।≠)	सुनहला विष	।≠)
पुर असर जादू	॥)	हनुमन्नाटक	१॥)

मिलने का पता :—

लहरी बुक-डिपो,

बनारस सिटी ।

काव्य-ग्रन्थरत्न-माला—रत्न ११

झरना
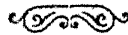
लेखक

जयशंकर "प्रसाद"
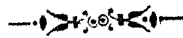
प्रकाशक

साहित्य-सेवा-सदन

बुलानाला, काशी

द्वितीयावृत्ति]   अक्षय तृतीया, १९८४ वि०   [मूल्य ।=)

प्रकाशक
गयाप्रसाद शुक्ल, एम० ए०, व्यवस्थापक,
साहित्य-सेवा-सदन,
बुलानाला, काशी

मुद्रक
बजरंगबली गुप्त 'विशारद'
श्रीसीताराम प्रेस,
विश्वेश्वरगंज, काशी

समर्पण

हृदयही तुम्हें दान कर दिया ।
क्षुद्र था, उसने गर्व्व किया ॥
तुम्हें पाया अगाध गम्भीर ।
कहाँ जल बिन्दु, कहाँ निधि क्षीर ॥
हमारा कहो न अब क्या रहा ?
तुम्हारा सब कब का हो रहा ॥
तुम्हें अर्पण; औ वस्तु त्वदीय ?
छीन लो छीन ममत्व मदीय ॥

परिचय

१

उषा का प्राची में आभास ।
　　　सरोरुह का, सर बीच विकाश ॥
कौन परिचय था ? क्या सम्बन्ध ?
　　　"गगन मण्डल में अरुण विलास ॥"

२

रहे रजनी में कहाँ मलिन्द ?
　　　सरोवर बीच खिला अरविन्द ॥
कौन परिचय था ? क्या सम्बन्ध ?
　　　"मधुर मधुमय मोहन मकरन्द ॥"

३

प्रफुल्लित मानस बीच सरोज ।
　　　मलय से अनिल चला कर खोज ॥
कौन परिचय था ? क्या सम्बन्ध ?
　　　"वही परिमल जो मिलता रोज़ ॥"

४

राग से अरुण, घुला मकरन्द ।
　　　मिला परिमल से जो सानन्द ॥
वही परिचय था, वह सम्बन्ध ।
　　　"प्रेम का, मेरा तेरा छन्द ॥"

सूचीपत्र

झरना

मधुर है स्रोत मधुर है लहरी।
न है उत्पात, छटा है छहरी॥

मनोहर झरना,

कठिन गिरि कहाँ विदारित, करना।

बात कुछ छिपी हुई है गहरी।
मधुर है स्रोत मधुर है लहरी॥

२

कल्पनातीत काल की घटना।
हृदय को लगी अचानक रटना॥

देखकर झरना,

प्रथम वर्षा से इसका भरना।

स्मरण हो रहा शैल का कटना।
कल्पनातीत काल की घटना॥

३

कर गई प्लावित तन मन सारा।
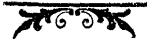
एक दिन तव अपाङ्ग की धारा॥

हृदय से झरना—

बह चला, जैसे दृगजल ढरना।

प्रणय वन्या ने किया पसारा।

कर गई प्लावित तन मन सारा॥

४

प्रेम की पवित्र परछाँई में।

लालसा हरित विटपि झाँई में॥

बह चला झरना,

ताप मय जीवन शीतल करना।

बात यह तेरी चतुराई में।

प्रेम की पवित्र परछाँई में॥
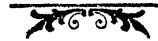
अव्यवस्थित

विश्व के नीरव निर्जन में।
जब करता हूँ बेकल, चंचल,
मानस को कुछ शान्त-
होती है कुछ ऐसी हलचल,
होजाता है भ्रान्त;
भटकता है भ्रम के वन में,
विश्व के कुसुमित कानन में।
जब लेता हूँ आभारी हो,
वल्लरियों से दान,
कलियों की माला बन जाती
अलियों का हो गान,
विकलता बढ़ती हिमकन में,
विश्वपति, तेरे आँगन में।
जब करता हूँ कभी प्रार्थना,
कर संकलित विचार,
तभी कामना के नूपुर की,
हो जाती झनकार;
चमत्कृत होता हूँ मन में,
विश्व के नीरव निर्जन में।

प्रथम प्रभात

मनोवृत्तियाँ खग-कुल-सी थीं सो रहीं
अन्तःकरण नवीन मनोहर नीड़ में।
नील-गगन-सा शान्त हृदय था हो रहा
बाह्य आन्तरिक प्रकृति सभी सोती रहीं॥
स्पन्दन-हीन नवीन मुकुल मन तुष्ट था,
अपने ही प्रच्छन्न विमल मकरन्द से।
अहा, अचानक किस मलयानिल ने तभी,
(फूलों के सौरभ से पूरा लदा हुआ)
आते ही कर स्पर्श गुदगुदाया हमें,
खुली आँख आनन्द दृश्य दिखला दिया।
मनोवेग मधुकर-सा फिर तो गूँज के,
मधुर-मधुर स्वर्गीय गान गाने लगा॥
वर्षा होने लगी कुसुम मकरन्द की।
प्राण पपीहा बोल उठा आनन्द में।
कैसी छवि ने बाल-अरुण-सी प्रकट हो,
शून्य हृदय को नवल राग रञ्जित किया।
सद्यः स्नात हुआ फिर प्रेम सुतीर्थ में—
मन पवित्र उत्साह-पूर्ण सा हो गया,
विश्व, विमल आनन्द-भवन-सा हो गया,
मेरे जीवन का वह प्रथम प्रभात था॥
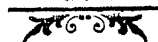
खोलो द्वार

शिशिर-कणोसे लदी हुई, कमलीके भींगे हैं सब तार।
चलता है पश्चिम का मारुत, लेकर शीतलता का भार॥
भींग रहा है रजनी का वह, सुन्दर कोमल कवरी-भार।
अरुण किरण सम कर से छूलो, खोलो प्रियतम! खोलो द्वार॥
धूल लगी है पद काँटों से बिंधा हुआ है दु:ख अपार।
किसी तरह से भूला-भटका आ पहुँचा हूँ तेरे द्वार॥
डरो न इतना, धूलिधूसरित होगा नहीं तुम्हारा द्वार।
धो डाले हैं इनको प्रियवर, इन आँखों से आँसू ढार॥
मेरे धूलि लगे पैरोसे, इतना करो न घृणा प्रकाश।
मेरे ऐसे धूलों से कब, तेरे पद को है अवकाश॥
पैरों ही से लिपटा-लिपटा कर लूँगा निज पद निर्धार।
अब तो छोड़ नहीं सकता हूँ, पाकर प्राप्य तुम्हारा द्वार॥
सुप्रभात मेरा भी होवे, इस रजनी का दु:ख अपार—
मिट जावे जो तुमको देखूँ, खोलो, प्रियतम! खोलो द्वार॥

रूप

ये वङ्किम भ्रू, युगल कुटिल कुन्तल घने,
नील नलिन से नेत्र—चपल मद से भरे,
अरुण राग रञ्जित कोमल हिम खण्ड से—
सुन्दर गोल कपोल, सुढर नासा बनी,

धवल स्मित जैसे शारद घन बीच में—
(जो कि कौमुदी से रञ्जित है हो रहा)
चपला-सी है ग्रीवा हँसी से बढ़ी।
रूप जलधि में लोल लहरियाँ उठ रहीं।

मुक्तागण हैं लिपटे कोमल कम्बु में।
चञ्चल चितवन चमकीली है कर रही—
सृष्टि मात्र को, मानो पूरी स्वच्छता—
चीनांशुक बनकर लिपटी हैं अङ्ग में।

अस्तव्यस्त है वह भी ढँकले कौन सा।
अङ्ग; न जिसमें कोई दृष्टि लगे उसे।
कोमल फूलों के रस से सींचे हुए।
पंख तितिलियों के करते हैं व्यजन-से।
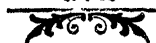
दो बूँदें

शरद का सुन्दर नीलाकाश,
निशा निखरी, था निर्मल हास।
बह रही छाया पथ में स्वच्छ
सुधा सरिता लेती उच्छ्वास॥

पुलक कर लगी देखने धरा,
प्रकृति भी सकी न आँखें मूँद।
सुशीतलकारी शशि आया,
सुधा की मनों बड़ी सी बूँद॥

× × × ×

हरित किसलयमय कोमल वृक्ष,
झुक रहा जिसका पाकर भार।
उसी पर रे मतवाले मधुप!
बैठकर करता तू गुञ्जार॥

न आशा कर तू अरे! अधीर,
कुसुम रज—रस से लूँगा गूँद।
फूल है नन्हा-सा-नादान,
भरा मकरन्द एक ही बूँद॥

१ पावस-प्रभात

नव तमाल श्यामल नीरद माला भली
श्रावण की राका रजनी में घिर चुकी।
अब उसके कुछ बचे अंश आकाश में
भूले भटके पथिक सदृश हैं घूमते ॥
अर्ध रात्रि में खिली हुई थी मालती,
उस पर से जो बिछल पड़ा था वह चपल—
मलयानिल भी अस्तव्यस्त है घूमता,
उसे स्थान ही कहीं ठहरने को नहीं।
मुक्त व्योम में उड़ते उड़ते डाल से
कातर अलस पपीहा की वह ध्वनि कभी—
निकल निकल कर भूल या कि अनजान में,
लगती है खोजने किसी को प्रेम से ॥
क्लान्त तारकागण की मद्यप-मण्डली,
नेत्र निमीलन करती है फिर खोलती।
रिक्त चषक-सा चन्द्र लुढ़ककर है गिरा,
रजनी के आपानक का अब अंत है ॥
रजनी के रञ्जक उपकरण बिखर गये,
घूँघट खोल उषा ने झाँका और फिर।
अरुण अपाङ्गों से देखा, कुछ हँस पड़ी,
लगी टहलने प्राची प्राङ्गण में तभी ॥
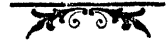
वसंत की प्रतीक्षा

परिश्रम करता हूँ अविराम, बनाता हूँ क्यारी औ कुंज।
सींचता दृग जल से सानन्द, खिलेगा कभी मल्लिका-पुंज॥

न काँटों की है कुछ परवाह, सजा रखता हूँ इन्हें सयत्न।
कभी तो होगा इनमें फूल, सफल होगा यह कभी प्रयत्न॥

कभी मधु राका देख इसे, करेगी इठलाती मधुहास।
अचानक फूल खिल उठेंगे, कुंज होगा मलयज-आवास॥

नई कोंपल में से कोकिल, कभी किलकारेगा सानन्द।
एक क्षण बैठ हमारे पास, पिला दोगे मदिरा मकरन्द॥

मूक हो मतवाली ममता, खिलेंफूलों से विश्व अनन्त।
चेतना बने अधीर मिलिन्द, आह, वह आवे विमल वसंत॥
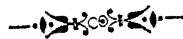
वसंत

तू आता है, फिर जाता है।

जीवन में पुलकित प्रणय सदृश,
यौवन की पहली कांति अकृश,

जैसी हो, वह तू पाता है, हे वसंत क्यों तू आता है?

पिक अपनी कूक सुनाता है,
तू आता है फिर जाता है।

बस, खुले हृदय से करुण कथा,
बीती बातें कुछ मर्म व्यथा,

वह डाल-डाल पर जाता है, फिर तालताल पर गाता है।

मलयज मंथर गति आता है,
तू आता है फिर जाता है।

जीवन की सुख दुख आशा सब,
पतझड़ हो पूर्ण हुई है अब,

फूला रसाल मुसक्याता है, कर-किसलय हिला बुलाता है।

हे वसंत क्यों तू आता है?
तू आता है फिर जाता है।

किरण

किरण ! तुम क्यों बिखरी हो आज, रंगी हो तुम किसके अनुराग,
स्वर्ण सरसिज किंजल्क समान, उड़ाती हो परमाणु पराग।
धरा पर झुकी प्रार्थना सदृश, मधुर मुरली सी फिर भी मौन,
किसी अज्ञात विश्व की विकल-वेदना-दूती सी तुम कौन ?

अरुण शिशुके मुख पर सविलास, सुनहली लट घुँघुराली कान्त,
नाचती हो जैसे तुम कौन ?—उषा के अञ्चल में अश्रान्त।
भला उस भोले मुख को छोड़, और चूमोगी किसका भाल,
मनोहर यह कैसा है नृत्य, कौन देता है सम पर ताल ?

कोकनद मधु धारा सी तरल, विश्व में बहती हो किस ओर ?
प्रकृति को देती परमानन्द, उठाकर सुन्दर सरस हिलोर।
स्वर्ग के सूत्र सदृश तुम कौन, मिलाती हो उससे भूलोक ?
जोड़ती हो कैसा सम्बन्ध, बना दोगी क्या विरज विशोक !

सुदिन मणि वलय विभूषित उषा—सुन्दरी के कर का संकेत—
कर रही हो तुम किसको मधुर, किसे दिखलाती प्रेम निकेत।
चपल ! ठहरो कुछ लो विश्राम, चल चुकी हो पथ शून्य अनन्त,
सुमन मन्दिर के खोलो द्वार, जगे फिर सोया वहाँ वसन्त।
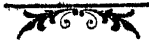
विषाद

कौन, प्रकृति के करुण काव्य सा, वृक्ष पत्र की मधु छाया में।
लिखा हुआ सा अचल पड़ा है, अमृत सदृश नश्वर काया में॥
अखिल विश्व के कोलाहल से, दूर सुदूर निभृत निर्जन में।
गोधूली के मलिनाञ्चल में, कौन जङ्गली बैठा बन में?

शिथिल पड़ी प्रत्यञ्चा किसकी, धनुष भग्न सब छिन्न जाल है।
बंशी नीरव पड़ी धूल में, वीणा का भी बुरा हाल है॥
किसके तममय अन्तरतम में, झिल्ली की झनकार हो रही।
स्मृति सन्नाटे से भर जाती, चपला ले विश्राम सो रही॥

किसके अन्त.करण अजिर में, अखिल व्योम का लेकर मोती।
आँसू का बादल बन जाता, फिर तुषार की वर्षा होती?
विषय शून्य किसकी चितवन है, ठहरी पलक अलक में आलस!
किसका यह सूखा सुहाग है, छिना हुआ किसका सारा रस?

निर्झर कौन बहुत बल खाकर, बिलखाता ठुकराता फिरता?
खोज रहा है स्थान धरामें, अपने ही चरणों में गिरता॥
किसी हृदय का यह विषाद है, छेड़ो मत यह सुख का कण है।
उत्तेजित कर मत दौड़ाओ, करुणा का विश्रान्त चरण है॥

—:*:—

बालू की बेला

आँख बचाकर न किरकिरा करदो इस जीवन का मेला।
कहाँ मिलोगे ?-किसी विजन में ?-न हो भीड़ का जब रेला ॥

दूर! कहाँ तक दूर? थका भरपूर चूर सब अंग हुआ।
दुर्गम पथ में विरथ दौड़कर खेल न था मैंने खेला ॥

कहते हो 'कुछ दुःख नहीं', हाँ ठीक, हँसी से पूछो तुम।
प्रश्न करो टेढ़ी चितवन से, किस-किसको किसने झेला ? ॥

आने दो मीठी मीड़ों से नूपुर की झनकार, रहो।
गलबाहीं दे हाथ बढ़ाओ, कह दो प्याला भर दे, ला! ॥

निठुर इन्हीं चरणों में मैं रत्नाकर हृदय उलीच रहा।
पुलकित, प्लावित रहो, बनो मत सूखी बालू की बेला ॥
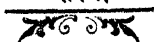
चिन्ह

इस अनन्त पथ के कितने ही. छोड़ छोड़ विश्राम-स्थान ;
आये थे हम विकल देखने, नव वसन्त का सुन्दर मान।
मानवता के निर्जन बनमें जड़ थी प्रकृति शान्त था व्योम ;
तपती थी मध्याह्न किरण-सी प्राणों की गति लोम विलोम।
आशा थी परिहास कर रही स्मृति का होता था उपहास ;
दूर क्षितिज में जाकर सोता था जीवन का नव उल्लास।
द्रुतगति से था दौड़ लगाता चक्कर खाता पवन हताश ;
विह्वल सी थी दीन वेदना मुँह खोले मलीन अवकाश।
हृदय एक निःश्वास फेंककर खोज रहा था प्रेम-निकेत ;
जीर्ण काण्ड वृक्षों के हँसकर रूखा-सा करते संकेत।
बिखर चुकी थी अम्बरतल में सौरभ की शुचितम सुख धूल ;
पृथ्वी पर थे विकल लोटते शुष्क पत्र मुरझाये फूल।
गोधूली की धूसर छवि ने चित्रपटी ली सकल समेट ;
निर्मल चिति का दीप जलाकर छोड़ चला यह अपनी भेंट।
मधुर आँच से गला बहावेगा शैलों से निर्झर लोक ;
शान्ति सुरसरी की शीतल जल लहरी को देता आलोक।
नव यौवन की प्रेम कल्पना और विरह का तीव्र विनोद।
स्वर्ण रत्न की तरल कान्ति, शिशु का स्मित या माता की गोद।
इसके तल के तम अञ्चल में इनकी लहरों का लघु भान ;
मधुर हँसी से अस्त व्यस्त हो, हो जायेगी फिर अवसान।

दीप

धूसर सन्ध्या चली आ रही थी अधिकार जमाने को,
अन्धकार अवसाद कालिमा लिये रहा बरसाने को।

गिरि संकट में जीवन-सोता मन मारे चुप बहता था,
कल कल नाद नहीं था उसमें मन की बात न कहता था।

इसे जान्हवी-सा आदर दे किसने भेट चढ़ाया है,
अञ्चल से सस्नेह बचाकर छोटा दीप जलाया है।

जला करेगा वक्षस्थल पर बहा करेगा लहरी में,
नाचेंगी अनुरक्त बीचियाँ रञ्जित प्रभा सुनहरी में।

तट तरु की छाया फिर उसका पैर चूमने जावेगी,
सुप्त खगों की नीरव स्मृति कलरव से गान सुनावेगी।

देख नग्न सौन्दर्य प्रकृति का निर्जन में अनुरागी हो,
निज प्रकाश डालेगा जिसमें अखिल विश्व सम भागी हो।

किसी माधुरी स्मित सा होकर यह संकेत बताने को,
जला करेगा दीप, चलेगा यह सोता बह जाने को
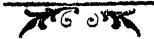
अर्चना

वीणे ! पञ्चम स्वर में बज कर मधुर मधु
बरसा दे तू स्वयं विश्व में आज तो।
उस वर्षा में भींगे जाने से भला
लौट चला आवे प्रियतम, इस भवन में।

आश्रय ले; मेरे वक्षस्थल में तनिक।
लज्जे ! जा, बस अब न सुनूँ मैं एक भी—
तेरी बातों में से; तूने दुख दिया,
रुष्ट हो गये प्रियतम, और चले गये

यह कैसा संकोच मन ! तुझे क्या हुआ !
बड़ी बड़ी अभिलाषायें इस हृदय ने
सञ्चित की थी इस छोटे भाण्डार में,
लज्जावती लता सा होकर संकुचित—

जो अपने ही में छिप जाना चाहता।
यदि साहस हो, उसे खोल कर देख लो,
मन मन्दिर में नाथ हमारी 'अर्चना'
हुई उपेक्षित तुमसे, हँसती है हमें।

स्निग्ध कामना कुसुम रचित यह मालिका—
लज्जित है, प्रियतम के गले लगी नहीं।
प्रियतम! ऐसा ही क्या तुमको उचित था।
प्राण प्रदीप न करता है आलोक वह—

जिसमें वाञ्छित रूप तुम्हारा देख लूँ।
जीवनधन! क्या अश्रु सलिल अभिषेक भी
तृप्त नहीं कर सका तुम्हें! सब व्यर्थ है!
बनो न इतने निर्दय सखे! प्रसन्न हो।

हो जावेगा जब निराश मन फिर कभी
ध्यान हमारा आवेगा, होगी दया।
तो क्या क्षुब्ध न होगे तुम?—यह सोच लो,
फिर, जैसा मन में आवे वैसा करो।
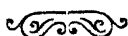
बिखरा हुआ प्रेम

अरुणोदय में चञ्चल होकर, व्याकुल होकर विकल प्रेम से,
मायामयी सुप्ति में सोकर, अति अधीर हो अर्धक्षेम से,
टुकड़े-टुकड़े कर फेंका था जीवन का निगूढ़ आनन्द,
नील-निशाके शून्य गगन में लो फैलाकर फिर छल छन्द,
बनकर तारा निकर मनोहर, उदय हुआ वह उसी नियम से।
रिक्त हुए हम व्यर्थ फेंककर, विकल हुए तम अतुल विषम से॥

प्रणयी प्रणत बनूँ मैं क्योंकर, दुर्बलता निज समझ, क्षोभ से,
जीवन मदिरा कैसे रोकर, भरूँ पात्र में तुच्छ लोभ से,
हाय! मुझे निष्किञ्चन क्यों कर डाला रे! मेरे अभिमान,
वही रहा पाथेय तुम्हारे, इस अनन्त पथ का अनजान,
बूँद-बूँदसे सींचो, पर ये, भीगेंगे न सकल अणु तुम से।
खोजो अपना प्रेम सुधाकर, प्लावित हो भव शीतल हिम से॥

एक तारा

मिट चुका है जीवन का साध।
बता दो मेरा क्या अपराध?
न पूछा "दर्द कैसा है तुम्हारा"
अरे तुमने, मुझे ऐसा बिसारा!

चन्द्र-दर्शन से हुआ निराश,
तारका भी देते न प्रकाश,
न निकलो अश्रु आँखों से हमारे।
तुम्हारा ही उसे केवल सहारा॥

गा रहा हूँ बस दुख का राग,
मिल गया विराग में अनुराग,
न वीणा ही रही, वंशी कहाँ है?
हृदय मेरा हुआ है एकतारा॥

प्रेम के मँगते को दो दान,
न दो तो, करो नहीं अपमान,
हमारी दीन की लंकुटी न तोड़ो।
भिखारी को रहा इसका सहारा॥

एक दिन मुझ को भी निश्शङ्क,
लगा रखते थे अपने अङ्क,
अरे निर्दय तुम्हें दुःख में पुकारा।
न पूछा हाल भी तुमने हमारा॥

कब ?

शून्य हृदय में प्रेम-जलद-माला कब फिर घिर आवेगी ?
वर्षा इन आखों से होगी, कब हरियाली छावेगी ?
रिक्त हो रही मधु से, सौरभ सूख रहा है आतप से ;
सुमन कली खिलकर कब अपनी पंखड़ियाँ बिखरावेगी ?
लम्बी विश्व कथा में सुख निद्रा समान इन आँखो में—
सरस मधुर छवि शान्त तुम्हारी कब आकर बस जावेगी ?
मन-मयूर कब नाच उठेगा कादंबिनी छटा लखकर ;
शीतल आलिंगन करने को सुरभि लहरियाँ आवेंगी ?
बढ़ उमंग सरिता आवेगी आर्द्र किये रूखी सिकता ;
सकल कामना स्रोत लीन हो पूर्ण विरति कब पावेगी ?

स्वभाव

दूर हटे रहते थे हम तो आप ही।
क्यो परिचित हो गये ?—न थे जब चाहते—
हम मिलना तुमसे। न हृदय में वेग था।
स्वयं दिखा कर सुन्दर हृदय मिला लिया
दूध और पानी-सा ; अब फिर क्या हुआ ?—
देकर जो कि खटाई फाड़ा चाहते।
भरा हुआ है नवल मेघ जल-बिन्दु से,
ऐसा पवन चलाया, क्यों बरसा दिया ?
शून्य हृदय हो गया जलद, सब प्रेम-जल—
देकर तुम्हें। न तुम कुछ भी पुलकित हुए।
मरु-धरणी-सम तुमने सब शोषित-किया।
क्या आशा थी ?-आशा-कानन को यही !
चञ्चल हृदय तुम्हारा केवल खेल था,
मेरी जीवन-मरण-समस्या हो गई।
डरते थे इसको, होते थे संकुचित—
"कभी न प्रकटित तुम स्वभाव कर दो कभी।"
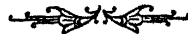
असंतोष

हरित वन कुसुमित हैं द्रुम-वृन्द ;
बरसता है मलयज मकरंद ।
स्नेह मय सुधा दीप है चन्द ;
खेलता शिशु होकर आनन्द ।
क्षुद्र गृह किंतु हुआ सुख मूल, उसी में मानव जाता भूल ।
नील नभ में शोभित विस्तार ;
प्रकृति है सुन्दर, परम उदार ।
नर हृदय, परिमित, पूरित स्वार्थ ;
बात जँचती कुछ नहीं यथार्थ ।
जहाँ सुख मिला न उससे तृप्ति ; स्वप्न सी आशा मिली सुषुप्ति ।
प्रणय की महिमा का मधु मोद,
नवल सुखमा का सरल विनोद,
विश्व गरिमा का जो था सार,
हुआ वह लघिमा का व्यापार ।
तुम्हारा मुक्तामय उपहार, हो रहा अश्रुकणों का हार ।
भरा जी तुमको पाकर भी न ;
हो गया छिछले जल का मीन ।
विश्वभर का विश्वास अपार,
सिन्धु-सा तैर गये उस पार ।
न हो जब मुझ को ही संतोष; तुम्हारा इसमें क्या है दोष ?
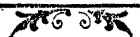
अनुनय

उसी स्मृति-सौरभ में मृग-मन मस्त रहे
यही है हमारी अभिलाषा सुन लीजिये।
शीतल हृदय सदा होता रहे आँसुओं से
छिपिये उसी में मत बाहर हो भीजिये॥

हो जो अवकाश तुम्हें ध्यान कभी आवे मेरा
अहो प्राणप्यारे, तो कठोरता न कीजिये।
क्रोध से, विषाद से, दया या पूर्व प्रीति ही से,
किसी भी बहाने से तो याद किया कीजिये॥
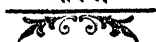
प्रियतम !

क्यों जीवन-धन ! ऐसा ही है न्याय तुम्हारा क्या सर्वत्र ?
लिखते हुए लेखनी हिलती, कँपता जाता है यह पत्र।
औरों के प्रति प्रेम तुम्हारा, इसका मुझको दुःख नहीं।
जिसके तुम हो एक सहारा, वही न भूला जाय कहीं॥
निर्दय होकर अपने प्रति, अपने को तुमको सौंप दिया॥
प्रेम नहीं, करुणा करने को क्षण-भर तुमने समय दिया !
अबसे भी तो अच्छा है, अब और न मुझे करो बदनाम।
क्रीड़ा तो हो चुकी तुम्हारी, मेरा क्या होता है काम ?
स्मृति को लिये हुए अन्तर में, जीवन कर देंगे निःशेष।
छोड़ो, अब दिखलाओ मत, मिल जाने का यह लोभ विशेष॥
कुछ भी मत दो, अपना ही जो मुझे बना लो, यही करो।
रक्खो जब तक आँखों में, फिर और ढार पर नहीं ढरो॥
कोर बरौनी का न लगे हाँ, इस कोमल मन को मेरे।
पुतली बन कर रहें चमकते, प्रियतम ! हम दृग में तेरे॥
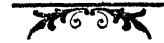
कहो ?

शिथिल शयन सम्भोग दलित कवरी के कुसुम सदृश कैसे,
प्रतिपद व्याकुल आज छन्द क्यों होते हैं प्रियतम ! ऐसे ?
वाणी मस्त हुई अपने में, उससे कुछ न कहा जाता ;
गद्गद् कण्ठ स्वयं सुनता है जो कुछ है वह कह जाता ॥
ऊँचे चढ़े हुए वीणाके तार मधुप-से गूँज रहे,
पर्दा रखते हैं सुर पर वे मनमाने-से बोल रहे ।
जीवन-धन ! यह आज हुआ क्या बतलाओ, मत मौन रहो,
वाह्य वियोग, मिलन या मनका, इसका कारण कौन कहो ?
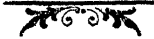
निवेदन

तेरा प्रेम हलाहल प्यारे, अब तो सुख से पीते हैं।
विरह-सुधा से बचे हुए हैं, मरने को हम जीते हैं॥
दौड़-दौड़ कर थका हुआ है, पड़ कर प्रेम-पिपासा में।
हृदय खूब ही भटक चुका है, मृग-मरीचिका-आशा में॥
मेरे मरुमय जीवन के हे सुधा-स्रोत!, दिखला जाओ।
अपनी आँखों के आँसू से इसको भी नहला जाओ॥
डरो नहीं, जो, तुमको मेरा उपालम्भ सुनना होगा।
केवल एक तुम्हारा चुम्बन इस मुखको 'चुप' कर देगा॥

प्यास

हृदय की दारुण ज्वाला से,
हुए व्याकुल हम उस दिन पूर्ण।
देखतीं प्यासी आँखें थीं,
रस भरी आँखों को मदघूर्ण॥
प्यास बढ़ती ही जाती थी,
बुझाने की इच्छा थी बड़ी।
बढ़ाया तुमने प्याला था,
अचञ्चल चित्त हुआ उस घड़ी॥
राग रंजित थी वह पेया,
उसे पीते पीते रुक गये।
प्रश्न मेरा यह उनसे था,
पूछने से वे प्रमुदित हुए॥
नशीली आँखों सदृश कहो,
तुम्हारी ही इसमें है नशा?
"गुलाबी हलका-सा" बोले,
स्तब्ध हो रही मोह की निशा॥
मौन थे सुना, प्रश्न मेरा,
"सदा यह बनी रहेगी भली।"
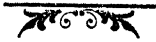
कँटीला था गुलाब चैती,
उठी चटचटा उसी की कली॥
उषा आभास चन्द्रिका में,
पवन-परिमल-परिपूरित सङ्ग।
बढ़ रही थी प्राची में वह,
बदलता था नभ का कुछ ढङ्ग॥
कहा व्याकुल हो मैंने भी,
तुम्हारे कोमल कर से वही—
चाहता पीना मैं प्रियतम,
नशा जिसकी उतरे ही नहीं॥
हृदय की बात नवीन कली—
सदृश हम खोल कह चुके हाय!
फुल्ल मल्लिका सदृश वह भी,
चुप रहे जीवनधन मुसक्याय॥

———
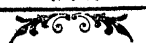
पी ! कहाँ ?

डाल पर बोलता है पपीहा—
"हो भला प्राणधन, तुम कहीं ?–हा !
आ मिलो हो जहाँ
पी ! कहाँ ? पी ! कहाँ ?

प्यास से मर रहे दीन चातक
क्यों बना चाहते प्राण–घातक ?
श्याम-घन ! हो कहाँ ?
पी ! कहाँ ? पी ! कहाँ ?

नभ–हृदय में घिरी मेघमाला
चंचला कर रही है उँजाला ॥
देख लूँ, हो कहाँ ?
पी ! कहाँ ? पी ! कहाँ ?

जलमयी हो रही यह धरा है।
कण्ठ फिर भी न होता हरा है ॥
प्यास में जल रहा
पी ! कहाँ ? पी ! कहाँ ?

प्यास कैसी तुम्हारी ? पपीहा !
कम न होकर बढ़ी जा रही हा !
लो, वही कह रहा—
पी ! कहाँ ? पी ! कहाँ ?

पाईबाग़

सरसों के पीले-काग़ज़ पर वसन्त की आज्ञा पाकर।
गिरा दिये वृक्षों ने सारे पत्ते अपने सुखला कर॥
खड़े देखते राह नये कोमल किसलय की आशा में।
परिमलपूरित पवन-कण्ठ से, लगने की अभिलाषा में॥
अतल सिंधु में लगा-लगा कर, जीवन की बेड़ी बाज़ी।
व्यर्थ लगाने को डुब्बी हाँ, होगा कौन भला राजी?
मिले नहीं जो वाञ्छित मुक्ता गले हार पहनाने को।
अपना गला कौन देगा यों, बस केवल मर जाने को!॥
अपना जीवन न्यौछावर कर, प्रेम लगे करने तुम से।
किस आशा पर हृदय लगावें, कहो न प्यारे, हम तुमसे॥
मलयानिल की तरह कभी आ, गले लगोगे तुम मेरे।
फिर विकसेगी उजड़ी क्यारी, क्या गुलाब की यह मेरे॥
कभी चहलक़दमी करने को, काँटों का कुछ ध्यान न कर।
अपना पाईबाग़ बना लोगे प्रिय! इस मन को आकर॥

प्रत्याशा

मन्द पवन बह रहा अँधेरी रात है।
आज अकेले निर्जन गृह में क्लान्त हो—
स्थित हूँ, प्रत्याशा में मैं तो प्राणधन!
शिथिल विपञ्ची मिली बिरह-संगीत से
बजने लगी उदास पहाड़ी रागिनी।
कहते हो—"उत्कण्ठा तेरी कपट है।"
नहीं नहीं उस धुँधले तारे को अभी,—
आधी खुली हुई खिड़की की राह से
जीवन-धन! मैं देख रहा हूँ सत्य ही।
दृग्गोचर होता है जो तम-व्योम में,
हिचको मत निस्सङ्ग न देख मुझे अभी।
तुमको आते देख, स्वयं हट जायँगे—
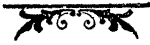
वे सब, आओ, मत संकोच करो यहाँ।
सुलभ हमारा मिलना है—कारण यही—
ध्यान हमारा नहीं तुम्हें जो हो रहा।
क्योंकि तुम्हारे हम तो करतलगत रहे
हाँ, हाँ, औरों की भी हो सम्बर्धना।
किन्तु न मेरी करो परीक्षा, प्राणधन!
होड़ लगाओ नहीं, न दो उत्तेजना।
चलने दो मलयानिल की शुचि चाल से।
हृदय हमारा नहीं हिलाने योग्य है।
चन्द्र-किरण हिम-विन्दु मधुर मकरन्द से—
बनी सुधा, रख दी है हीरक-पात्र में।
मत छलकाओ इसे, प्रेम-परिपूर्ण है।

स्वप्नलोक

स्वप्न लोक में आज जागरण के समय
प्रत्याशा की उत्कण्ठा में पूर्ण था
हृदय हमारा, फूल रहा था कुसुम सा।
देर तुम्हारे आने में थी, इसलिये
कलियों की माला विरचित की थी कि, हाँ
जबतक तुम आवोगे ये खिल जाँयगी।
ये सब खिलने लगीं, न हमको ज्ञात था।
आँख खोल देखा तो चन्द्रालोक से
रञ्जित कोमल बादल नभ में छागये,
जिस पर पवन सहारे तुम हो आरहे।
हाय कली थी एक हृदय के पास ही
माला में, वह गड़ने लगी, न खिल सकी।
मैं व्याकुल हो उठा कि तुमको अङ्क में
लेलूँ, तुमने झोरी फेंकी सुमन की।
मस्त हुई आँखें सोने को जग पड़े।
सुप्त सकल उद्वेग जग पड़े मोह में॥
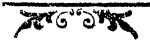
दर्शन

जीवन-नाव अँधेरे अन्धड़ में चली।
अद्भुत परिवर्त्तन यह कैसा हो गया।
निर्मल जल पर सुधा भरी है चन्द्रिका
बिछल पड़ी मेरी छोटी सी नाव भी
वंशी की स्वर लहरी नीरव व्योम में
गूँज रही है, परिमल पूरित पवन भी
खेल रहा है, जल लहरी के सङ्ग में।
प्रकृति भरा प्याला दिखला कर व्योम में
बहकाती है, और नदी उस ओर ही
बहती है। खिड़की उस ऊँचे महल की
दूर दिखाई देती है, अब क्यों रुके
नौका मेरी, द्विगुणित गति से चल पड़ी।
किन्तु किसी के मुख की छवि किरणें घनी
रजत रज्जु सी लिपटी नौका से वहीं
बीच नदी में नाव किनारे लग गई।
उस मोहन मुख का दर्शन होने लगा॥
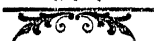
मिलन

मिल गये प्रियतम हमारे मिल गये
यह अलस जीवन सफल अब हो गया।
कौन कहता है जगत है दुख मय।
यह सरस संसार सुख का सिंधु है।

इस हमारे और प्रिय के मिलन से
स्वर्ग आकर मेदिनी से मिल रहा,
कोकिलों का स्वर विपञ्ची नाद भी
चन्द्रिका, मलयजपवन, मकरन्द औ

मधुप माधविकाकुसुम से कुञ्ज में
मिल रहे, सब साज मिल कर बजरहे
आज इस हृदयाब्धि में, बस क्या कहूँ।
तुङ्ग तरल तरङ्ग ऐसी उठ रही

शीतकर शतशत उदय होने लगे।
तारकायें नील नभ में आज ये
फूल की झालर बनी हैं शोभती
गन्ध सौरभ वायुमण्डल की तहें

अन्तरिक्ष विशाल में है मिल रही।
चन्द्रकर पीयूष वर्षा कर रहा।
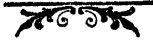
दृष्टि पथ में सृष्टि है आलोकमय,
विश्ववैभव से भरा यह धन्य है।

हृदय-वीणा कर रही प्रस्तार अब
तीव्र पञ्चम तान की उल्लास से।
बंसुरी पिक पा नहीं सकता कभी
इस रसीली मूर्च्छना की मत्तता।

हृदय-कोश खुला हुआ है आज तो,—
विश्व-भर ले ले महोत्सव का मजा॥
आज बस, आनन्द ही आनन्द है।
मिल गये मोहन हमारे मिल गये॥
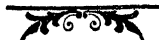
आशालता

१

तुम्हारी करुणा ने प्राणेश ?
बना करके मनमोहन वेश ॥
दीनता को अपनाया,
उसी से स्नेह बढ़ाया;
लता अज्ञात बढ़ चली साथ ।
मिला था करुणा का शुभ हाथ ॥

२

नित्य की सन्ध्या और प्रभात ।
स्वर्ण मय जब होता रविगात ॥
व्योम ने रङ्ग खिलाया,
विश्व ने व्यर्थ नहाया;
स्वर्णघट में जल भरकर कान्त ।
दीनता लाती थी अश्रान्त ॥
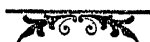
३

दया का स्पर्श मात्र अभिराम।
बनाता उसे सुरभि का धाम॥
उसी जल से सिंचवाया,
मधुप गण को बुलवाया;
निछावर करते थे जो प्राण।
बिना फूलों की पाये घ्राण॥

४

बहुत दिन तक सिञ्चन का कार्य्य।
हुआ करता अविरल अनिवार्य्य॥
युगल ही अंकुर आया,
लता ने और न पाया;
गई करुणा भी इक दिन ऊब।
कहा अनखा कर उसने खूब॥

५

"तुम्हारी आशालता सिचाँव।
बहुत ले चुकी, न देती दाँव॥
सींचकर क्या फल पाया,
फूल भी हाथ न आया"
नील नीरद माला सी दृष्टि॥
दीनता की, करती थी वृष्टि।
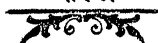
सुधासिञ्चन

बहुत दिन से था हृदय निराश,

रहा अब तो है समय नहीं।

लगाऊँगा छाती से आज,

सुनो प्रियतम! अब तुम्हें यहीं॥

मचलता है यह मन, जो प्राण!

सम्हालूँगा मैं इसे नहीं।

कहे देता हूँ दूँगा छोड़—

भाग्य पर, इसको जाय कहीं॥

तुम्हारा शीतल सुख—परिरम्भ,

मिलेगा और न मुझे कहीं।

विश्व भर का भी हो व्यवधान,

आज वह बाल बराबर नहीं॥

स्फूर्ति से बदले सारी क्लान्ति।

शान्ति में भ्रान्ति न रहे कहीं।

हृदय-क्षत मलयज से खिल जाय,

सुमन भी समता पावे नहीं॥

रागिनी गावे तुङ्ग तरंग,

लहर ले हृदय पयोधि यहीं।

घटा से निकले बस नवचन्द्र,

सुधा से सींची जाय मही॥
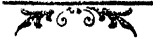
तुम !

जीवन जगत के, विकास विश्व वेद के हो,
परम प्रकाश हो, स्वयं ही पूर्ण काम हो;
विधि के विरोध हो, निषेध की व्यवस्था तुम,
खेद भय रहित, अभेद, अभिराम हो।
कारण तुम्हीं थे, अब कर्म हो रहे हो तुम्हीं,
धर्म कृषि मर्म के नवीन घनश्याम हो,
रमणीय आप महामोदमय धाम, तो भी
रोम रोम रम रहे, कैसे तुम राम हो ?
बुद्धि के, विवेक के, या ज्ञान, अनुमान के भी
आये जो पतंग तुम्हें देखने, चले गये;
बलिहारी माधुरी अनंत कमनीयता की,
रूपवाले लोटने को पैरों के तले गये।
शंका लगी होने किसी को, तो कोई सपने सा
जपने लगा है आप भूल में जले गये;
छलने के लिये तो सवाँग बहुरूपिए के
तुमने लिए अनेक तुमही छले गये।
सुमन समूहों में सुहास करता है कौन,
मुकुलों में कौन मकरंद सा अनूप है;
मृदु मलयानिलसा माधुरी उषा में कौन,
स्पर्श करता है, हिमकाल में ज्यों धूप है।

मान है तुम्हारा, अभिमान है हमारा, यह
"नहीं नहीं" करना भी "हाँ" का प्रतिरूप है;
घूँघट की ओट में छिपा है भला कैसे कभी,
फूटकर निखर बिखरता जो रूप है।
होकर अतृप्त तुम्हें देखने को नित्य नया
रूप दिये देता हूँ पुराना छोड़ने के लिये;
तुम्हें भी न होता परितोष कभी मेरी जान,
बनते ही जाते हो रहस्य जोड़ने के लिये।
कंज कामना की आँखें आलस से बंद सोई
चंद उपहारों से भी मुँह मोड़ने के लिये:
बंधन में बँधता प्रतिज्ञा की प्रतीति किए,
तुम हँस देते, बस, उसे तोड़ने के लिये।
दीन दुखियों को देख आतुर अधीर अति
करुणा के साथ उनके भी कभी रोते चलो;
थके श्रमी जीवों के पसीने भरे सीने लग
जीने को सफल करने के लिये सोते चलो।
भूले, भोले बालकों के इस विश्व खेल में भी
लीला ही से हार और श्रम सब खोते चलो;
सुखी कर विश्व, भरे स्मित सुखमा से मुख
सेवा सबकी हो, तो प्रसन्न तुम होते चलो।

हृदय का सौंदर्य

नदी की विस्तृत बेला शांत,
　　　　अरुण मंडल का स्वर्ण विलास;
निशा का नीरव चन्द्र-विनोद,
　　　　कुसुम का हँसते हुए विकास।
एक से एक मनोहर दृश्य,
　　　　प्रकृति की क्रीड़ा के सब छंद;
सृष्टि में सब कुछ है अभिराम,
　　　　सभी में है उन्नति या ह्रास।
बना लो अपना हृदय प्रशांत,
　　　　तनिक तब देखो वह सौंदर्य;
चन्द्रिका से उज्वल आलोक,
　　　　मल्लिका सा मोहन मृदुहास।
अरुण हो सकल विश्व अनुराग,
　　　　करुण हो निर्दय मानव चित्त;
उठे मधुलहरी मानस में,
　　　　कूल पर मलयज का हो वास।
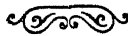
प्रार्थना

देख लो अपनी आँखों से,

दृश्य रमणीय रूप का आज।

प्राणधन! सच तुमको सौगंद

तुम्हारा यह अभिनव है साज॥

उग्र सौंदर्यमयी मधु-कांति,

अरुण-यौवन का उदय विशेष।

सहज-सुषमा मदिरा से मत्त,

अहा! कैसा नैसर्गिक वेश!

देखकर जिसे एक ही बार,

हो गए हम भी हैं अनुरक्त।

देख लो तुम भी यदि निज रूप,

तुम्हीं हो जाओगे आसक्त!

दृष्टि फिर गई तुम्हारी, किया—

सृष्टि ने मधु-धारा में स्नान।

बह चली मंदाकिनी मरन्द—

भरी, करती कोमल कल गान॥

प्रार्थना अंतर की मेरी—

यही जन्मान्तर की हो उक्ति।

"जन्म हो, निरखूँ तव सौंदर्य

मिले इंगित से जीवन्मुक्ति"
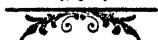
होली की रात

बरसते हो तारों के फूल ।
छिपे तुम नील पटी में कौन ॥
उड़ रही है सौरभ की धूल ।
कोकिला कैसे रहती मौन ॥
चाँदनी धुली हुई है आज ।
बिछलते हैं तितली के पंख ॥
सम्हलकर, मिलकर बजते साज ।
मधुर उठती हैं तान असंख ॥
तरल हीरक लहराता शान्त ।
सरल आशा सा पूरित ताल ॥
सिताबी छिड़क रहा विधु कान्त ।
बिछा है सेज कमलिनी जाल ॥
पिये, गाते मनमाने गीत ।
टोलियाँ मधुपों की अविराम ॥
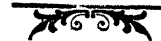
चली आतीं, कर रहीं अभीत ।

कुमुद पर बरजोरी विश्राम ॥

उड़ा दो मत गुलाल सी हाय ।

अरे अभिलाषाओं की धूल ॥

और ही रंग नहीं लग जाय ।

मधुर मंजरियाँ जावें भूल ॥

विश्व में ऐसा शीतल खेल ।

हृदय में जलन रहे, क्या बात !

स्नेह से जलती होली झेल ।

बनाली हाँ, होली की रात ॥

झील में
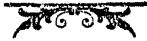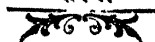
झील में झाईं पड़ती थी,
श्याम बनशाली तट की कान्त
चन्द्रमा नभ में हँसता था,
बज रही थी वीणा अश्रान्त ॥
तृप्ति में आशा बढ़ती थी,
चन्द्रिका में मिलता था ध्वान्त ॥
गगन में सुमन खिल रहे थे,
मुग्ध हो प्रकृति स्तब्ध थी शान्त ॥
निभृत था—पर हम दोनों थे
वृत्तियाँ रह न सकीं फिर दान्त ।
कहा जब व्याकुल हो उनसे—
"मिलेगा कब ऐसा एकान्त ?"
हाथ में हाथ लिया मैंने
हुए वे सहसा शिथिल नितान्त ।
मलय ताड़ित किसलय कोमल
हिल उठी उंगली, देखा ; भ्रान्त ॥
झील, झाईं, नभ, शशि, तारा,
विटप इंगित करते अश्रान्त ।
तारका तरल झलकते थे,
अष्टमी के शारदशशि प्रान्त ॥

रत्न

मिल गया था पथ में वह रत्न ।
किन्तु हमने फिर किया न यत्न ॥
पहल न उसमें था बना,
चढ़ा न रहा खराद ।
स्वाभाविकता में छिपा,
न था कलङ्क विषाद ॥
चमक थी, न थी तड़प की झोंक ।
रहा केवल मधु स्निग्धालोक ॥

मूल्य था मुझे नहीं मालुम ।
किन्तु मन लेता उसको चूम ॥
उसे दिखाने के लिये,
उठता हृदय कचोट ।
और रुके रहते सभय,
करे न कोई चोट ॥
बिना समझेही रखदे मूल्य ।
न था जिस मणि के कोई तुल्य ॥

जान कर के भी उसे अमोल।
बढ़ा कौतूहल का फिर तोल॥
मन आग्रह करने लगा,
लगा पूछने दाम।
चला आँकाने के लिए,
वह लोभी बे काम॥
पहन कर किया नहीं व्यवहार।
बनाया नहीं गले का हार॥

कुछ नहीं

हँसी आती है मुझ को तभी,
जब कि यह कहता कोई कहीं—
अरे सच, वह तो है कंगाल,
अमुक धन उसके पास नहीं।

सकल निधियों का वह आधार,
प्रमाता अखिल विश्व का सत्य,
लिये सब उसके बैठा पास
उसे आवश्यकता ही नहीं।

और तुम लेके पेकी वस्तु,
गर्व करते हो मन में तुच्छ,
कभी जब ले लेगा वह उसे
तुम्हारा तब सब होगा नहीं।

तुम्हीं तब हो जाओगे दीन,
और जिसका सब संचित किए,
साथ बैठा है दीनानाथ,
उसे फिर कमी कहाँ की रही?

शांत रत्नाकर का नाविक,
गुप्त निधियों का रक्षक यक्ष,
कर रहा वह देखो मृदु हास,
और तुम कहते हो 'कुछ नहीं।
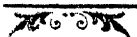
आदेश

कौन कहता है कानों में,
किसी का कहना तू मत मान।
अन्ध विश्वास दिलाते वे,
इसी में बनते हैं विद्वान॥
शुद्ध मानस की लहरी लोल,
पंक्तियाँ पावन लिखी विचित्र।
छोड़ ममता पढ़ ले इसको,
यही है शुभ आदेश महान॥
तोड़ कर बाधा बन्धन भेद,
भूल जा अहमिति का यह स्वार्थ।
सुधा भर ले जीवन घट में,
द्वन्द्व का विष मत करना पान॥
प्रार्थना और तपस्या क्यों?
पुजारी किसकी है यह भक्ति।
डरा है तू निज पापों से,
इसी से करता निज अपमान॥
दुखी पर करुणा क्षण भर हो,
प्रार्थना पहरों के बदले।
हमें विश्वास है कि वह सत्य,
करेगा आकर तव सम्मान॥
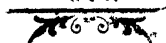
देवबाला

दूर कृत्रिमते ! यहाँ मत आ री,
यहाँ एकत्रित सरलता सारी।
न छूना इसको नव कुहक शीला;
चञ्चले ! यह तो विमल विधु लीला॥
सात रंगों का इन्द्र धनु क्या है,
छिपेगा क्षण में कभी ठहरा है।
नई कोंपल पर किरण माला सी,
खेलती है यह देव बालासी।
सुवासित जल भी बिगड़ जाता है,
सुमन सौरभ क्या न उड़ जाता है।
शिशिर बूँदों में चमक रहती है,
ताप रवि कर का न सह सकती है।
सुरसरी की यह विमल धारा है,
स्नेह नभ की यह नवल तारा है।
शील निधि का यह सुढर मोती है,
मधुरिमा इतनी कहाँ होती है?

कसौटी

तिरस्कार कालिमा कलित है,
अविश्वास-सी पिच्छल है।
कौन कसौटी पर ठहरेगा?
किसमें प्रचुर मनोबल है?
तपा चुके हो विरह-वह्नि में,
काम जँचाने का न इसे।
शुद्ध सुवर्ण हृदय है प्रियतम!
तुमको शंका केवल है॥
बिका हुआ है जीवन-धन यह
कब का तेरे हाथों में।
बेदामों का, है अमूल्य यह
ले लो इसे, नहीं छल है॥
कृपा कटाक्ष अलं है केवल,
कोरदार या कोमल हो।
कट जावे तो सुख पावेगा,
बार-बार यह विह्वल है॥
सौदा कर लो बात मान लो,
फिर पीछे पछता लेना।
खरी वस्तु है, कहीं न इसमें,
बाल बराबर भी [बल है॥

अतिथि

हृदय-गुफा थी शून्य,

रहा घोर सूना।

इसे बसाऊँ शीघ्र,

बढ़ा मन दूना॥

अतिथि आ गया एक,

नहीं पहचाना।

हुए नहीं पद-शब्द,

न मैंने जाना॥

हुआ बड़ा आनन्द,

बसा घर मेरा।

मनको मिला विनोद,

कर लिया घेरा॥

उसको कहते "प्रेम"

अरे अब जाना।

लगे कठिन नख-रेख,

तभी पहचाना॥

अतिथि रहा वह किन्तु,

न घर बाहर था।

लगा खेलने खेल,

अरे, नाहर था॥
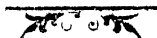
सुधा में गरल

१

सुधा में मिला दिया क्यों गरल।
पिलाया तुमने कैसा तरल॥

मॉंगा होकर दीन,
कंठ सींचने के लिये;
गर्म्म झील का मीन,
निर्दय, तुमने कर दिया॥

सुना था तुम हो सुन्दर ! सरल।
सुधा में मिला दिया क्यो गरल॥

२

राग रञ्जित सन्ध्या हो चली।
कुमुदिनी मुकुलित हो कुछ खिली॥
तारागण नभ प्रान्त,
क्षितिज छोर में चन्द्र था।
फैला कोमल ध्वान्त,
दीपक जल कर बुझ गये।
हमें जाने की आज्ञा मिली।
राग रञ्जित सन्ध्या हो चली॥

३

विजन बन, आधी रजनी गई।
मधुर मुरली ध्वनि चुप हो गई॥
थी मुझको अज्ञात,
शुक्ल पक्ष की अष्टमी,
बीते कैसे रात,
अस्त हो गई कौमुदी—
राह मे ही, वह भी है नई।
विजन बन आधी रजनी गई॥
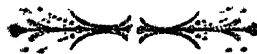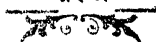
उपेक्षा करना

किसी पर मरना यही तो दुख है!
'उपेक्षा करना' मुझे भी सुख है;
यही प्रार्थना हमारी।

हमारे उर में न सुख पावोगे;
मिला है किसको कहाँ जावोगे?
चपल यह चाल तुम्हारी॥

स्वच्छ आलोकित दीप बलता है,
पखग्रुत कीड़ा सतत जलता है;
वही है दशा हमारी।

मोह या बदला! कौन कह सकता॥
प्रेम या पीड़ा! कौन सह सकता;
न हो वह दशा तुम्हारी॥

जलन छाती की बड़ी सहता हूँ,
मिलो मत मुझसे यही कहता हूँ;
बड़ी हो दया तुम्हारी।

तुम रहो शीतल हमें जलने दो,
तमाशा देखो हाथ मलने दो;
तुम्हें है शपथ हमारी॥
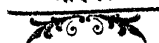
वेदने, ठहरो!

सुखद थी पीड़ा, हृदय की क्रीड़ा

प्राण में भरी भयानक भक्ति।

मनोहर मुख था, न मुझ को दुःख था;

रही विप्रयोग में न विरक्ति॥

वेदना मिलती, औषधी घुलती।

मिलन का स्वप्न कराता भान॥

नवल निद्रा का, मधुर तन्द्रा का

व्यथा आरम्भ; वहीं अवसान॥

न मुझसे अड़ना, कहाँ का लड़ना,

प्राण है केवल मेरा अस्त्र।

वेदने, ठहरो! कलह तुम न करो,

नहीं तो कर दूँगा निश्शस्त्र॥

धूल का खेल

१

धूप थी बड़ी पवन था उष्ण;
धूलि की भी थी कमी नहीं।
भूल कर विश्व, खेल में व्यस्त;
रहे हम उस दिन कभी कहीं॥

२

विमल सम्भोग, न वह कथनीय;
न बाधा उसमें कहीं रही।
न था उद्देश्य, न था परिणाम;
मिलेगा वह आनन्द कहीं॥

३

शरद की शान्त नदी जलखेल,
सदृश होता अनुभूत वहीं।
खेल की नाव, जहाँ ले जाव;
रुकावट तो थी कहीं नहीं॥

४

प्रलोभन पुञ्ज, समादर सहित;
दिये थे तुमने कौन नहीं।
अङ्क में लिया, वक्ष था शीत,
तुम्हारा हिम से बढ़ा कहीं॥

५

उष्ण निश्वास, हुआ सहसा,
तुम्हारा, पहले रहा नहीं ॥
तुम्हारी गोद, न अच्छी लगी;
उतरने को मचला तबही ॥

६

धूल का खेल, लगे खेलने;
किन्तु वह क्रीड़ा ही न रही।
बोझ हो गया, सरल आनन्द;
मिलेगा फिर अब हमें कहीं ?

विन्दु !

रे मन !

न कर तू कभी दूर का प्रेम।

निष्ठुर ही रहना, अच्छा है, यही करेगा क्षेम॥

देख न,

यह पतझड़ वसन्त एकत्रित मिला हुआ संसार।

किसी तरह से उदासीन ही कट जाना उपकार॥

या फिर,

जिसे चाह तू, उसे न कर आँखों से कुछ भी दूर।

मिल रहे मन मन से, छाती छाती से भरपूर॥

लेकिन,

परदेशी की प्रीति उपजती अनायास ही आय।

नाहर नख से हृदय लड़ाना, और कहूँ क्या हाय?
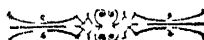
बिन्दु

आज इस घन की अँधियारी में,
कौन तमाल झूमता है इस सजी सुमन-क्यारी में ?
हंस कर बिजली-सी चमका कर हमको कौन रुलाता,
बरस रहे है ये दोनों दृग कैसे हरियारी में ?

हृदय में छिपे रहे इस डर से,
उसको भी तो छिपा लिया था, नहीं प्रेम रस बरसे।
लगे न स्नेह कभी इसको भी बिछल पड़े न सुपथ से॥
मुक्त आवरण हो देखे न मनोहर कोई रथ से।
पर कैसी अपरूप छटा लेकर आये तुम प्यारे॥
हृदय हुआ अधिकृत अब तुमसे, तुम जीते हम हारे।

सुमन, तुम कली बने रह जाओ,
ये भौंरे केवल रस-लोभी इन्हें न पास बुलाओ।
हवा लगी बस, झटपट अपना हृदय खोल दिखलाते॥
फूले जाते किस आशा पर कहो न क्या फल पाते ?
मधुर गन्धमय स्वच्छ कुसुम-रस क्यों बरबस हो खोते।
कितनों ही को देखो तुम-सा, हँसते है फिर रोते॥
सूखी पङ्खड़ियों को देखो, इन्हें भूल मत जाओ।
मिला विकसने का प्रसाद यह, सोचो मन में लाओ॥

साहित्य-मार्ग-प्रदर्शक

साहित्यके मार्गको सुगम बनानेके लिए प्राचीन आचार्यों, कवियों, को पथ-प्रदर्शक बनाइए। उनके कृति-दीपकको हाथमें लीजिए।

ऐसे पथ-प्रदर्शकोंसे आपका परिचय कराने तथा उनके कृति-दीपकपर पड़े हुए गर्द-गुब्बारों को साफ कर आपके हाथमें देनेका ठेका 'साहित्य-सेवा-सदन' ने ले लिया है।

नवीन कृतिलब्ध, साहित्यके जानकर मार्ग-परिष्कर्त्ताओंसे भी आपको मिला देनेमें 'सदन' पीछे न रहेगा।

सदनका परिचय, पता-ठिकाना आदिकी जानकारीके लिए इस पुस्तिकाको आद्यन्त पढ़ जाइए।

सदनकी विशेषताएँ

१—सदनकी प्रत्येक पुस्तक बड़े-बड़े विद्वानों द्वारा उसकी उपयोगिता, आवश्यकता और समयानुकूलता, लेखन, प्रतिपादन तथा सम्पादन-शैली की उत्तमता आदि सिद्ध हो जानेपर ही प्रकाशित की जाती हैं।

२—सदनकी पुस्तकें सभी समाजों तथा विचारोंके स्त्री-पुरुषोंके लिए समान रूपसे उपयोगी होती हैं। सदनकी पुस्तक-मालाओंमें अश्लील अथवा अपाठ्य पुस्तकोंको स्थान नहीं दिया जाता।

३—सदन की पुस्तकें प्रत्येक शिष्ट समाज, लाइब्रेरी, स्कूल, कालेज आदिमें संग्रहणीय तथा विद्यार्थियोंको उपहारमें देने योग्य होती हैं।

४—सदनकी पुस्तकें अन्य पुस्तक-प्रकाशकोंकी पुस्तकोंकी अपेक्षा बहुत सस्ती होती हैं। जिन सज्जनोंको इसमें सन्देह हो, उन्हें इस विषयके किसी अनुभवीसे जाँच कर अपना भ्रम दूर कर लेना चाहिए।

५—सदनकी ग्राहक-संख्याकी वृद्धिके साथ उसकी पुस्तकोंका मूल्य बराबर कम होता जा रहा है। प्रकाशित पुस्तकें इसका प्रमाण हैं।

६—सदनके स्थायी ग्राहक अपनी इच्छा और रुचिके अनुसार सदनकी कुल अथवा कोई पुस्तक या पुस्तकें ले सकते हैं। अन्य ग्रन्थ-मालाओंकी भांति हमारे यहां इसका कोई बन्धन नहीं है।

साहित्य-सेवा-सदन, काशी

द्वारा

(होली, सं० १९८३ वि० तक)

प्रकाशित पुस्तकें

काव्य-ग्रन्थरत्न माला—प्रथम रत्न

बिहारी-सतसई सटीक

[७०० सातो सौ दोहोंकी पूरी टीका]

टीका० लाला भगवानदीन

यह वही पुस्तक है कि जिसके कारण कविकुल कुमुद-कलाधर बिहारीलालकी विमल ख्याति राका साहित्य संसारके कोने कोनेमें अजरामरवत् फैली हुई हैं और जिसकी कि केवल समालोचनाने ही विद्वन्मण्डलीमें हलचल मचा दी है। सच पूछिए तो शृङ्गाररसमें इसके जोड़की कोई भी दूसरी पुस्तक नहीं है। यह अनुपम और अद्वितीय ग्रन्थ है। इसका प्रत्यक्ष प्रमाण यही हैं कि आज २५० वर्षोंमे ही इस ग्रन्थकी ४० ५० टीकाएँ बन चुकी है। इतनी टीकाएँ तो तैयार हुई हैं, किन्तु वे सभी प्राचीन ढगकी हैं, इसीलिए समझमे ज़रा कम आती हैं। उसी कठिनाईको दूर करनेके लिए साहित्य-संसारके सुपरिचित कविवर लाला भगवानदीनजी, प्रो० हिन्दू—विश्व—विद्यालय, काशी, ने अर्वाचीन ढगकी नवीन टीका तैयार की है। टीका कैसी होगी, इसका अनुमान पाठक टीकाकारके नामसे ही करलें। इसमें बिहारीके प्रत्येक दोहेके नीचे उसके शब्दार्थ, भावार्थ, विशेषार्थ, वचन-निरूपण, अलंकार आदि सभी ज्ञातव्य बातोंका समावेश किया गया है। जगह-जगहपर सूचनाएँ दी गयीं है। मतलब यह कि सभी ज़रूरी बातें इस टीकामें आ गयी हैं। दूसरे परिवर्द्धित तथा संशोधित संस्करणका मूल्य १।=)। बढ़िया कागज़ सचित्रका मूल्य १॥)

पुस्तकपर आयी हुइ कुछ सम्मतियाँ–

कोई टीका अबतक कालिजके छात्रोंके लिए अर्वाचीन ढंगसे नहीं मिलती। किन्तु, इस टीकामें साधारण विद्यार्थियोंके लिए लिखते हुए भी कविके चमत्कारका स्थान स्थानपर निदर्शन कराया गया है। महत्त्वके शब्दोंके अर्थ दिये हैं। अलंकार बतलाये हैं। कहीं-कहीं प्रीतमजीके उर्दू पद्यानुवादके नमूने भी है। भाषा स्पष्ट है। विद्यार्थियोंकी जितनी आवश्यकताएँ हैं, सभी पूरी की गयी है।

[सरस्वती]

पुस्तक लेखककी अभिनन्दनीय कृति है। यह वस्तुतः अपने नामको सार्थक करती है। यह छात्र और गुरु दोनोंके लिए एक दृष्टिसे समानतः उपयोगिनी है। बिहारी सतसईके इस तरहके भी एक अनुवादकी आवश्यकता थी। हर्षकी बात है कि यह कमी हिंदीके सुप्रसिद्ध लेखक—ला० भगवानदीन द्वारा पूरी हो गयी। इसके लिए कोई भी योग्य व्यक्ति लाला साहबकी सराहना किये बिना नहीं रह सकता।

(सौरभ)

'शारदा' आदि अन्य पत्रिकाओं तथा बड़े बडे विद्वानोंने भी इस पुस्तककी बडी प्रशंसा की है। स्थानाभावके कारण यहाँ अधिक सम्मतियां उद्धृत नहीं की गयी हैं।

This book is sanctioned as a reference book for Hindi Teachers in high schools of Central Provinces & Berar.

Vide order no. 6801, Dated 28-9-26.

काव्य ग्रन्थरत्न माला–चतुर्थ रत्न

केशव–कौमुदी

(रामचन्द्रिका सटीक)

हिन्दीके महाकवि आचार्य केशवकी सर्वश्रेष्ठ पुस्तक रामचन्द्रिका-का परिचय देना तो व्यर्थ ही है। क्योंकि शायद ही हिन्दीका कोई ऐसा ज्ञाता होगा, जो इस ग्रन्थके नामसे अपरिचित हो। अतः केशवकी यह पुस्तक जितनी ही उत्तम तथा उपयोगी है, उतनी ही कठिन भी है। अर्थ कठिनतामें केशवकी काव्य प्रतिभा उसी प्रकार छिपी पड़ी हुई है, जिस प्रकार रुईके ढेरमें हीरेकी कान्ति। केशवकी इसी काव्य-प्रतिभाको प्रकाशमें लानेके लिए यह सम्मेलनादिमें पाठ्य–पुस्तक नियत की गयी है। परीक्षार्थियोंको इसका अध्ययन करना आवश्यक हो जाता है। पर, पुस्तककी कठिनताके आगे इनका कोई वश नहीं चलता। उन्हें लाचार होकर हिन्दी के धुरंधरोंके पास दौड़ना पडता है। किन्तु वहां से भी "भाई हम इसका अर्थ बतानेमें असमर्थ हैं" का उत्तर पाकर बैरङ्ग लौटना पडता है। खासकर इसी कठिनाईको दूर करने तथा उनके अध्ययन-मार्गको सुगमतर बनानेके लिए यह पुस्तक प्रकाशित की गयी है। इस पुस्तकमें रामचन्द्रिकाके मूल छन्दोंके नीचे उनके शब्दार्थ, भावार्थ, विशेषार्थ, नोट, अलंकारादि दिये गये हैं। यथा स्थान कविके चमत्कार निर्दशनके साथ-ही-साथ काव्य–गुणदोषोंकी पूर्ण रूप से विवेचना की गयी है। छन्दोंके नाम तथा अप्रचलित छन्दोंके लक्षण भी दिये गये हैं। पाठ भी कई हस्तलिखित प्रतियोंसे मिलाकर संशोधित किया गया है। इन सब विशेषताओंसे बढ़कर एक विशेषता यह है कि इसके टीकाकार हिन्दीके सुप्रसिद्ध विद्वान् तथा हिन्दू-विश्वविद्यालयके प्रोफेसर लाला भगवानदीनजी हैं। पुस्तक परीक्षार्थी-तर सज्जनोंके भी देखने योग्य है। यह पुस्तक दो भागोंमें समाप्त हुई है। मूल्य साढ़े पांच सौ पृष्ठोंके प्रथम भागका, जिसमें रंग-बिरंगे चित्र भी हैं, २॥।), सजिल्द ३)। द्वितीय भागका २।), सजिल्द २॥)।

Sanctioned as a reference book for Hindi Teachers in high schools of Central Provinces & Berar. Vide order no. 6801, Dated 28-9-26.

काव्य ग्रन्थरत्न माला—पाचवाँ रत्न

रहीम-रत्नावली

[रहिमनविलासका संशोधित तथा परिवर्द्धित संस्करण]

यों तो रहीमकी कविताओंके सग्रह कई स्थानोंसे प्रकाशित हो चुके है, किन्तु इतना बड़ा और इतना अच्छा संस्करण कहींसे भी प्रकाशित नहीं हुआ है। इस सस्करणमे कितनी ही विशेषताएँ हैं। इन विशेषताओंके कारण इसका महत्त्व अत्यधिक बढ़ गया है। मेरा अनुरोध है कि एकबार इसे आप अवश्य देखें। इस सस्करणकी विशेषताएँ—

(१) इसमे संग्रहीत दोहोंकी सख्या लगभग ३०० के है।

(२)नगर शोभा-वर्णन नामक १४४ दोहों का नया ग्रन्थ खोजमे मिलाहै।

(३) बरवै नायिका भेदके बरवे तथा नये मिले हुए सवा सौ बरवे दोनों ही इसमें हैं।

(४) मदनाष्टकके सम्बन्धमे भी बड़ी छान बीन की गयी है।

(५) शृङ्गार-सोरठ, रहीम काव्यके श्लोक तथा अन्य फुटकर प्राप्त पदोंका भी संग्रह इसमें है।

(६) अनेक हस्तलिखित प्रतियोंसे मिलान कर इसका पाठ शुद्ध किया गया है। पाठान्तर भी दिये गये हैं।

(७) समान आशयवाले (Parallel Quotations) अन्य कवियोंके छन्द भी टिप्पणीके साथ दिये गये हैं।

(८) रहीमके दो चित्र भी दिये गये हैं।

(९) इन सबके अतिरिक्त प्रारम्भमें गवेषणापूर्ण वृहद् काय भूमिका भी इसमें जोड़ दी गयी है, जिसमें रहीमके काव्यकी आलोचनाके साथ ही साथ उनके सम्बन्धकी किम्बदन्तियाँ, जीवनी आदि दी गयी है। इसके कारण पुस्तकका महत्त्व अत्यधिक बढ गया है।

(१०) पुस्तकान्तमे टिप्पणियां भी भरपूर दे दी गयीहै। सुपरिचित साहित्य सेवी प० मायाशङ्करजी याज्ञिकने इस सस्करणका सम्पादन किया है। पृष्ठ-संख्या लगभग २००के। मूल्य ||=)

काव्य ग्रन्थरत्न-माला -छठाँ रत्न

गो० तुलसीदासजी कृत
विनय-पत्रिका सटीक
(टीकाकार-वियोगीहरि)

सर्वमान्य 'रामायण' के प्रणेता महात्मा तुलसीदासजीका नाम भला कौन नहीं जानता ? बड़ेसे बड़े राजमहलोसे लेकर छोटेसे छोटे झोपड़ो तकमे गोस्वामीजीकी विमल कीर्तिकी चर्चा होती है। क्या राव, क्या रंक, क्या बालक, क्या वृद्ध, क्या मर्द, क्या औरत सभी उनके रामायणका पाठ प्रतिदिन करते हैं, अङ्गरेजी-साहित्यमे जो पद शेक्सपियरका है, जो पद संस्कृत-साहित्यमें कालिदासका है, वही पद हिन्दी-साहित्यमें तुलसीदास को प्राप्त है। उपर्युक्त 'विनयपत्रिका' भी इन्ही गोस्वामी तुलसीदासजीकी कृति है। कहते है कि गोस्वामीजीकी सर्वश्रेष्ठ रचना यही विनय-पत्रिका है। विनय-पत्रिकाका-सा भक्ति-ज्ञानका दूसरा कोइ ग्रन्थ नही है। इसमे गोस्वामीजीने अपना सारा पाण्डित्य खर्च कर दिया है। इसकी रचनामें उन्होने अपनी लेखनीका अद्भुत चमत्कार दिखलाया है। गणेश, शिव, हनुमान, भरत, लक्ष्मण आदि पार्षदो-सहित जगदीश श्रीरामचन्द्रकी स्तुतिके बहाने वेदान्त-के गूढ़ तत्त्वोंका समावेश कर दिया है। वेद, पुराण,उपनिषद, गीतादिमे वर्णित ज्ञानकी सभी बातें इसमे गागरमे सागरकी भाँति भर दी गयी है। यह भक्ति-ज्ञानका अपूर्व ग्रन्थ है। साहित्य-की दृष्टिसे भी यह उच्चकोटिका ग्रन्थ है। इतना सब कुछ होनेपर भी इसका प्रचार रामायणके सदृश न होने का एक यही मुख्य कारण है कि यह पुस्तक, भाषामे होनेपर भी, कठिन है। दूसरे वेदान्तके गूढ़ रहस्योका समझ लेना भी सब किसीका काम नहीहै तीसरे अभी तक कोई सरल, सुबोध तथा उत्तम टीका भी इस ग्रन्थ पर नही बना। इन्ही कठिनाइयो को दूर करनेके लिए सम्मेलन-पत्रि-

काके सम्पादक तथा साहित्य-विहार, व्रजमाधुरीसार, संक्षिप्त सूरसागर आदि ग्रन्थोंके लेखक तथा संकलनकर्ता लब्ध-प्रतिष्ठ वियोगीहरिजीने इस पुस्तककी विस्तृत तथा सरल टीका की है। वियोगीजी साहित्यके प्रकाण्ड पण्डित हैं, यह सभी जानते हैं। अतः उनका परिचय देनेकी आवश्यकता भी नहीं है। इस टीकामें शब्दार्थ, भावार्थ, विशेषार्थ, प्रसग, पदच्छेद आदि सब ही कुछ दिये गये हैं। भावार्थके नीचे टिप्पणीमे अन्तर् कथाएँ, अलंकार, शंकासाधान आदिके साथ ही साथ समानार्थी हिन्दी तथा संस्कृत काव्योंके अवतरण भी दिये गये हैं। अर्थ तथा प्रसंगपुष्टिके लिए गीता, वाल्मीकि रामायण तथा भागवत आदि पुराणोंके श्लोक भी उद्धृत किये गये हैं। दर्शनिक भाव तो खूबही समझाये गये है। उपर्युक्त बातोंके समावेशके कारण यह पुस्तक अपने ढंगकी अद्वितीय हुई है, अब मूढ़ जन भी भगवद्-ज्ञानामृतका पान कर मोक्षके अधिकारी हो सकते है। हिन्दी-साहित्यमें यह टीका कितने महत्त्वकी हुई है, यह उदारचेता, काव्य-कला-मज्ञ एवं नीर-क्षीर-विवेकी साहित्यज्ञ ही बतला सकते है। तुलसी-काव्य सुधा-पिपासु सज्जनोंसे हमारा आग्रह है कि एक प्रति इसकी खरीदकर गुसाँईजीकी रसमयी वाणीका वह आनन्द अवश्य लें, जिससे अभी तक वे वंचित रहे हैं। छपाई-सफाई भी दर्शनीय है। लग-भग ७००सात सौ पृष्ठोंकी पुस्तकका मूल्य २॥) ढाई रुपये, सजिल्द २॥।), बढ़िया कपड़ेकी जिल्दका ३)।

This book is sanctioned as a reference book for Hindi Teachers in high schools of Central Provinces & Berar.

[Vide order no. 6801 Dated 28-9-26]

गुलदस्तए बिहारी

(लेखक—देवीप्रसाद 'प्रीतम')

बिहारी–सतसईके परिचय देनेकी कोई आवश्यकता नहीं, सभी साहित्य-प्रेमी उसके नामसे परिचित है। यह गुलदस्तए बिहारी उसी बिहारी-सतसईके दोहोंपर रचे हुए उर्दू शैरोका संग्रह है, अथवा यो कहिए कि बिहारी–सतसई-की उर्दू-पद्यमय टीका है। ये शैर सुननेमे जैसे मधुर और चित्ताकर्षक है, वैसे ही भाव-भङ्गीके ख्यालसे भी अनुपम हैं। इनमें दोहोके अनुवादमें, मूलके एक भी भाव छूटने नही पाये हैं, बल्कि कही-कही उनसे भी अधिक भाव शैरोंमें आ गये हैं। ये शैर इतने सरल हैं कि मामूलीसे मामूली हिन्दी जाननेवाला उन्हें अच्छी तरह समझ सकता है। इन शैरोंकी पं० महावीरप्रसाद द्विवेदी, पं० पद्मसिंह शर्म्मा, मिश्रबन्धु, लाला भगवानदीन, वियोगीहरि आदि उद्भट् विद्वानोंने मुक्त-कंठसे प्रशंसा की है। अतः विशेष कहना व्यर्थ है।

छपाई मे यह क्रम रखा गया है कि ऊपर बिहारीका मूल दोहा देकर, नीचे प्रीतमजी-रचित उसी दोहेका शैर हिन्दी लिपि-मे दिया गया है। स्वयं एक बार देखनेसे ही इसकी विशेषता-का परिचय आपको मिल सकता है। बिहारी-प्रेमियोको इसे एक बार अवश्य देखना चाहिए। पृष्ठ-संख्या १७५ के लगभग। मूल्य ॥॥≈)। सचित्र राजसंस्करणका १॥) उर्दू सहित का १।)॰ राज सं० २) पुस्तकों में कठिन उर्दू शब्दो के अर्थ भी दे दिये गये हैं जिससे हिन्दी जानने वालों को विशेष सुविधा होगी।

महात्मा सूरदासजी प्रणीत

भ्रमरगीत-सार

(सम्पादक पं० रामचन्द्र शुक्ल)

सन्त-शिरोमणि, साहित्याकाश प्रभाकर, महात्मा सूरदास-जीसे विरले ही हिन्दी प्रेमी अपरिचित होंगे। सूरदासजी हिन्दी-साहित्यकी विभूति हैं, जीवन-सर्वस्व है। इनकी काव्य-गुण-गरिमाका उसको घमंड है। कहा भी है "सूर सूर तुलसी शशि, उडुगण केशवदास"। यथार्थमें हिन्दीमें उनका सर्वोच्च स्थान है। इनकी अनुपम उपमा, कविता-माधुरी तथा अर्थ-गंभीरताके सभी कायल हैं। इन्ही महात्माके उत्कृष्ट पदोंका यह संग्रह है, सागरका सार अमृत है। सूर-सागरका सर्वोत्कृष्ट अंश भ्रमरगीत माना जाता है। उसी भ्रमरगीतके चुने हुए पदोंका यह संग्रह है। इसमे चार सौसे भी ऊपर पद आ गये हैं। इसका सम्पादन हिन्दी-साहित्य-संसारके चिरपरिचित एवं दिग्गज विद्वान् पं० रामचन्द्र शुक्ल, प्रो० हिन्दू-विश्वविद्यालय काशी, ने किया है। एक तो सूरदासकी कविता, दूसरे हिन्दीके विशिष्ट विद्वान् द्वारा उसका संपादन 'सोनेमे सुगन्ध' हो गया है। सम्पादकजीकी ८० अस्सी पृष्ठकी दीर्घकाय भूमिका ही पुस्तककी महत्ताको दुगुनी कर रही है। पदोंमे आये हुए कठिन शब्दोंके सरलार्थ भी पाद-टिप्पणीमे दे दिये गये है। यह पुस्तक हिन्दू-यूनिवर्सिटीमें एम० ए० में पढ़ाई भी जाती है। विशेष क्या! पुस्तकका महत्त्व उसके देखने ही पर चल सकेगा। पृष्ठ-संख्या करीब २५० के। मूल्य १)

काव्य-ग्रन्थरत्न-माला—नवाँ रत्न

अनुराग-वाटिका

[प्रणेता श्रीवियोगीहरिजी]

वियोगीहरिजीसे हिन्दी-साहित्य-प्रेमीगण भलीभाँति परिचित है। साहित्य-विहार, अन्तर्नाद, ब्रजमाधुरीसार, कविकीर्तन, तरंगिणी आदि ग्रंथोंके देखनेसे उनकी असाधारण प्रतिभाका परिचय मिल जाता है। इस पुस्तिकामें इन्हीं वियोगीहरिजी-प्रणीत व्रजभाषाकी कविताओंका संग्रह हैं। कविताके एक-एक शब्द अमूल्य रत्न है, कवि-प्रतिभाके द्योतक है। अनुराग वाटिकाका कुछ अंश सम्मेलन, सरस्वती आदि पत्रिकाओंमे निकल चुका है और साहित्य रसिकों द्वारा सम्मानित भी हो चुका है। छपाई सफाई सुन्दर। मूल्य केवल ।-) ।

छप रही है:-

वृन्द-सतसई

महाकवि वृन्दकी जीवनी, बड़े खोजके साथ इसमें दी गयी है। पुस्तकान्तमें पर्याप्त टिप्पणियाँ भी दे दी गयी हैं। पाठ अनेकों प्राचीन प्रतियोंसे मिलाकर शुद्ध किया गया है।

काव्य-ग्रन्थरत्न-माला—दसवाँ रत्न

तुलसी-सूक्ति-सुधा

(सम्पा० वियोगीहरिजी)

इसमें जगन्मान्य गोस्वामी तुलसीदासजी प्रणीत समस्त ग्रन्थोंकी चुनी हुई अनूठी उक्तियोंका संग्रह किया गया है। जो लोग समयाभाव या अन्य कारणों से गोस्वामीजीके सभी ग्रंथोंका अवलोकन नही कर सकते, उन लोगोंको इस एक ही पुस्तकके पढ़नेसे गोस्वामीजीके समस्त ग्रन्थों के पढ़नेका आनन्द आ जायगा। इस पुस्तकमें ग्यारह अध्याय है—१ चरित-विंदु, २ ध्यान-विन्दु, ३ विनय-विन्दु, ४ तीर्थ-विन्दु, ५ अध्यात्म-विन्दु, ६ साधन-विन्दु, ७ पुरुष-परीक्षा-विन्दु, ७ उद्बोध-विन्दु, ९ व्यवहार-विन्दु, १० निज-निवेदन-विन्दु, ११ विविध सूक्ति विन्दु। इसमें आपको राजनीति, समाजनीति भक्ति, ज्ञान, वैराग्य आदि सभी विषयोंपर अच्छीसे अच्छी उक्तियाँ बिना प्रयास एक ही जगह मिल जायँगी। साहित्यिक छटाके लिए तो कुछ कहना ही नही है। इसके तो तुलसीदास-जी आचार्य ही ठहरे। साहित्यके अध्येताओं तथा जन साधारण दोनोंको ही इस ग्रन्थसे बडी सहायता मिलेगी। यह ग्रन्थ रोज काममें आनेवाले उपदेशोंका अपूर्व भंडार है। इसके पाठसे सभी लाभ उठा सकते है, अनुकरण करनेसे आदर्श बन सकते हैं, सतयुग फिर आ सकता है। इसमें प्रारम्भमें आलोचनात्मक विशद भूमिका भी संपादकजीने पाठकोंके सुभीतेके लिए जोड़ दी है। पाद टिप्पणीमें कठिन शब्दों तथा स्थलोंकी पूर्णरूपसे व्याख्या भी कर दी गयी है। पृष्ठ-संख्या ५९० के ऊपर है। मूल्य केवल २)।

भारतेन्दु-स्मारक ग्रन्थमालिका — संख्या १

कुसुम-संग्रह

सम्पादक पं० रामचन्द्र शुक्ल, प्रो० हिन्दू-विश्वविद्यालय तथा लेखिका हिन्दी-संसारकी चिरपरिचित श्रीमती बगमहिला। इसमें रवीन्द्रनाथ ठाकुर, देवेन्द्रकुमार राय, रामानन्द चट्टोपाध्याय आदि धुरन्धर विद्वानोंके छोटे छोटे उपन्यासों तथा लेखोंका अनुवाद है। कुछ लेख लेखिकाके निजके है। पुस्तक बडी ही रोचक तथा शिक्षाप्रद है। इसे संयुक्तप्रान्तकी तथा मध्यप्रदेशकी [Vide order no. 9754, dated 12-12 26] गवर्नमेण्टने पुरस्कार पुस्तको तथा पुस्तकालयो [Prize books and Libraries] के लिए स्वीकृत किया है। कुछ स्कूलोंमें पाठ्य-पुस्तक भी नियत की गयी है। छपाई-सफाई सुन्दर, सात रंग-बिरंगे चित्रोंसे विभूषित, एँटीक पेपरपर छपी पुस्तकका मूल्य १॥)

पुस्तकपर आयी हुई कुछ सम्मतियाँ—

काशी-नागरी-प्रचारिणी सभाने उन्नीसवें वर्षके कार्यविवरणमें "कुसुम संग्रह" की गणना उत्तम पुस्तकोंमें करके इसका गौरव बढ़ाया है।

The book will form an admirable prize Book in girl s shool We repeat that the book will from a nice and useful present to females. It is not less interesting to the general reader.

—*The Modern Review*—

The language of the book is excellent and the subjects treated are also very useful.

MAJOR B. D. BASU, I M. S. [Retired] Editor, the Sacred Books of the Hindu Series.

सच्चे सामाजिक उपन्यासोके भण्डारकी पूर्ति ऐसी ही पुस्तकोंसे हो सकती है।...इसमे ऐसी शिक्षाप्रद आख्यायिकाओंका समावेश है जिनको पढ़कर साधरणतया सभी स्त्रियोंके आदर्श उच्च हो सकते है और सामाजिक जीवन प्रशस्त जीवन बन सकता है।...भाषा बहुत सरल है, जिससे लेखिकाका उद्योग भलीभांति पूर्ण हो गया है।

—नवजीवन

भारतेन्दु स्मारक ग्रन्थमालिका-संख्या २

भारतेन्दु-हरिश्चन्द्र कृत

मुद्राराक्षस सटीक

[सं० व्रजरत्नदास बी० ए०]

भारत-भूषण भारतेन्दु बा० हरिश्चन्द्रजी वर्तमान हिन्दी-साहित्य-के जन्मदाता माने जाते हैं। आपने जो काम हिन्दी-जगतका किया है, उसे हिन्दी-भाषी यावज्जीवन भूल नहीं सकते। आपने महाकवि विशाखदत्तके संस्कृत नाटक मुद्राराक्षसका अनुवाद गद्य-पद्यमय हिन्दी भाषामें किया है। यह अनुवाद मूल ग्रन्थसे कितना ही आगे बढ़गया है, इसमें मौलिकता आगयी है। यह नाटक इतना लोकप्रिय हुआ है कि भारतकी प्रायः सभी यूनिवर्सिटियों तथा साहित्य-विद्यालयोंमें पाठ्य ग्रन्थ रखा गया है। हमने विद्यार्थियोंके लाभार्थ इसी पुस्तकका शुद्ध तथा उपयोगी संस्करण निकाला है। आजकल बाजारमें जो संस्करण बिक रहा है, वह अत्यन्त अशुद्ध है। उससे लाभके बदले उलटी हानिही होती है। इस संस्करणमें अध्येताओंके लिए ८० अस्सी पृष्टकी आलोचनात्मक भूमिका भी प्रारम्भमें दे दी गयी है, जिसमें कवि प्रतिभा, नाटकका इतिहास, लेखन-शैली आदिपर गवेषणापूर्ण आलोचना की गयी है। अन्तमें करीब १५० डेढ़ सौ पृष्ठों में भरपूर टिप्पणी दी गयी है, जिसमें नाटकमें आये हुए पद्यांशोंकी पूरी टीका तथा गद्यांशोंके कठिन शब्दोंके अर्थ दिये गये है, अलंकार आदि बतलाये गये हैं, स्थल-स्थलपर तुलनाके लिए संस्कृत मूल भी उद्धृत किये गये हैं, प्रमाणके लिए साहित्य-दर्पण काव्य-प्रकाश आदि ग्रन्थोंके अवतरण भी दिये गये हैं। कहनेका मतलब यह कि सभी आवश्यकीय बातें समझा दी गयी हैं। इसका संशोधन पं० रामचन्द्र शुक्ल तथा बा० श्यामसुन्दर दासजी बी० ए० प्रो० हिन्दूविश्वविद्यालयने किया है। संपादन नागरी—प्रचारिणी सभाके मन्त्री व्रजरत्नदासजी बी० ए० ने किया है। पृष्ठ-संख्या ३५० के लगभग। मूल्य १) मात्र।

स्थायी ग्राहकोंके लिए नियम—

[१] ग्राहक बननेके लिए बारह आना प्रवेश शुल्क देना पड़ता है।

[२] ग्राहकोको इस कार्यालयके समस्त पूर्व प्रकाशित तथा आगे प्रकाशित होनेवाले ग्रन्थोंकी एकएक प्रतिपौने मूल्यमें दीजातीहै।

[३] किसी भी पुस्तकका लेना अथवा न लेना ग्राहकोंकी इच्छापर निर्भर है। किन्तु वर्षभरमें कमसे कम तीन रुपये [पूरे मूल्य] की पुस्तकें लेनी पड़ती हैं।

[४] किसी भी पुस्तकके प्रकाशित होते ही, मूल्यादि की सूचना दे देनेके पन्द्रह दिवस पश्चात् उसकी वी० पी० भेज दी जाती है। यदि किसी ग्राहकको कोई पुस्तक न लेनी हो तो सूचना पाते ही मनाही कर देना चाहिए, ताकि वह न भेजी जाय। वी० पी० लौटानेसे डाक-व्यय उन्हींको देना पड़ेगा, अन्यथा उनका नाम ग्राहक-श्रेणीसे पृथक् कर दिया जायगा।

[५] ग्राहकोंके इच्छानुसार डाक-व्ययके बचावके लिए ३-४ पुस्तकें एक साथ भेजी जा सकती है।

[६] सदनके ४ स्थायी ग्राहक बनानेवाले सज्जनको यदि वे चाहेंगे तो, बिना किसी प्रकारका शुल्क लिए ही स्थायी ग्राहकके कुल अधिकार दिये जायँगे। इसी प्रकार १० स्थायी ग्राहक बनानेवाले सज्जनको, यदि वे स्वीकार करें तो, तीन रुपये मूल्यकी सदन द्वारा प्रकाशित कोई भी पुस्तक या पुस्तक प्रदान की जायँगी, और २५ स्थायी ग्राहक बनानेवाले महानुभावका नाम आगे प्रकाशित होनेवाली पुस्तकमें सधन्यवाद प्रकाशित कर दिया जायगा।

[७] पत्र भेजे यदि १० दिन हो जायँ और उसका कोई उत्तर न मिले, तो शीघ्र ही दूसरा पत्र भेजना चाहिए।

सूचना—ग्राहकोंको प्रत्येक पत्रमे अपना ग्राहक-नम्बर पता इत्यादि स्पष्ट लिखना चाहिए।